ॐ

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तसै नमस्तसै नमस्तसै नमो नमः ।।

हमारे बुद्धिजीवी, हमारी मीडिया, हमारे न्यायाधीश

राम मंदिर के संदर्भ में

मानोज रखित

मेरा नाम **मा** से प्रारंभ होता है (नारायणी माँ भवतारिणी के प्रति समर्पण का प्रतीक) - इसे मनोज का अपभ्रंश न समझें - कृपया मानोज का उच्चारण **मा** से करें, एवं रखित का उच्चारण **रा** से **न** करें

© मानोज रखित - लेखन, डी टी पी, एवं प्रकाशन

अंतर्राष्ट्रीय मानक पुस्तक संख्या (आइ-एस-बी-एन)
८१-८९७४६-१९-७ (जून २००४)

२००३ एवं २००४ में प्रकाशित *राम मंदिर तुम्हें पुकारता* अब अपने मूल रूप में प्रकाशित नहीं की जायेगी।
एक नवीन प्रस्तुति के साथ यह दो खण्डों में छापी जा रही है
(१) कहानी एक षड़यंत्र की
(२) हमारे बुद्धिजीवी, हमारी मीडिया, हमारे न्यायाधीश

मुद्रण आइडियल प्रेस, अम्बावाड़ी, दहिसर पूर्व, मुम्बई ४००-०६८

झूठ जिनकी विरासत है और जो झूठ बाँटते फिरते हैं

बहुत समय नहीं बीता। **२४ दिसंबर २००२** को टाइम्स ऑफ़ इंडिया (मुंबई संस्करण) ने एक ख़बर छापी जिसमें उन्होने शीरीन रत्नागर को मुम्बई के **नामी पुरातत्वज्ञ** एवं जवाहर लाल नेहरु विश्वविद्यालय के सेवानिवृत **पुरातत्व का प्रॉफ़ेसर** बताया।

शीरीन रत्नाकर ने पाठकों को विश्वास दिलाया कि अयोध्या में मस्जिद के पहले मंदिर होने के उपयुक्त पुरातात्विक (खुदाई से उपलब्ध) प्रमाण नहीं हैं। मैने अगले ही दिन टाइम्स ऑफ़ इंडिया को लिखा, बहुत सारे पुरातात्विक प्रमाणों का उल्लेख कर, पर टाइम्स ऑफ़ इंडिया ने उसे नहीं छापा, न मेरे पत्र का कोई उत्तर दिया।

मेरे मन में प्रश्न उठा, आख़िर टाइम्स ऑफ़ इंडिया का उद्देश्य क्या है? **पाठकों तक सच्चाई को पहुँचाना, या उसे छुपाना और पाठकों के मन में वहम फैलाना?** इसी प्रकार की कई

और झूठ हमने टाइम्स ऑफ़ इंडिया को फैलाते देखा, जिनका विवरण हम अपनी अन्य पुस्तकों में देंगे उचित स्थानों पर।

प्रत्येक बार हम उन्हें लिखते रहे और वे उसे अनदेखा करते रहे, उसके बाद हमने निर्णय लिया कि हम ऐसे समाचार पत्र को नहीं पढेंगे जो जान बूझ कर झूठ को फैलाता है और सच को दबाता है। प्रत्येक व्यक्ति जो ऐसे समाचार पत्र को ख़रीदता है **वह एक मिथ्यावादी को परोक्ष रूप से सहायता करता है।**

अपने नाम और पद का लाभ उठाकर, शीरीन रत्नागर जैसे प्रॉफ़ेसर यदि साधारण जनता को गुमराह करते रहेंगे, तो जनता को एक दिन निर्णय लेने पर बाध्य होना पड़ेगा कि ऐसे प्रॉफ़ेसरों के साथ कैसा व्यवहार किया जाए, क्योंकि ये विश्वविद्यालयों के प्रॉफ़ेसर सरकार के पैसों पर जीते है, जो जनता के कर से आता है, और **जनता का खा कर ये निर्लज्ज जनता को गुमराह करते हैं।**

डॉ कोएनराड एल्स्ट लिखते हैं कि बाबरी मस्जिद के पक्ष वाले, ये अपने आप को धर्मनिरपेक्ष कहने वाले, **अक्सर ख़ुदाई का विरोध करते रहे,** जबकि हिंदू पक्ष बराबर इसकी माँग करता रहा (संदर्भ - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ १८२)।

पूछिए ऐसा क्यों? क्योंकि ये झूठे धर्मनिरपेक्ष (जो वास्तव में धर्मनिरपेक्षता की ख़ाल ओढ़े हुए कॉम्युनिस्ट-मार्क्सिस्ट **बुद्धिजीवी** हैं) जानते थे कि **जितनी ख़ुदाई होगी, उतनी ही उनकी झूठ की पोल खुलती जाएगी।**

प्रमाणों का परीक्षण करने देश के कोने-कोने से ४० पुरातत्वज्ञ आए परीक्षण करने के पश्चात सभी एकमत हुए कि वहाँ मंदिर था

डॉ एस पी गुप्ता इलाहाबाद संग्रहालय के संचालक रहे हैं। सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर डॉ गुप्ता की टीकाओं से हमें बहुत कुछ जानने को मिलता है। उन टीकाओं का संक्षिप्त विवरण हम आपके लिए प्रस्तुत करते हैं, इस अध्याय में, पर हमारे अपने शब्दों में। संदर्भ - डॉ एस पी गुप्ता, पृष्ठ ११२-१२२

प्रॉफ़ेसर बी बी लाल जो भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण के मुख्य निर्देशक रहें हैं, उन्होने **१९७५ से १९८० के बीच, अयोध्या में बहुत ख़ुदाई की - उस स्थान पर भी जहाँ जन्मस्थान-मस्जिद हुआ करता था।**

प्रॉफ़ेसर लाल ने वहाँ १४ खाइयाँ खोदीं, यह जानने के लिए कि वह जगह कितनी पुरानी थी। उन खुदाईयों से यह पता चला कि **वह नगर कम से कम ३,००० वर्ष पुराना रहा होगा,** संभवतः उससे अधिक। **ध्यान दें** ईसा एवं हज़रत मुहम्मद अभी तक **पैदा भी नहीं हुए थे**, बाबर को तो अभी सदियों लगने वाले थे। **श्री राम का नगर तब भी वहाँ मौजूद था**।

वहाँ उन खाइयों में बड़े-बड़े समानांतर चौकोर स्तंभों वाले, ईंट और पत्थरों का बना हुआ एक बहुत बड़ा ढाँचा पाया गया। दरवाज़ों पर **हिंदू मूर्तियाँ** काढ़ी हुई पाई गईं। यक्ष, यक्षी, कीर्ति मुख, पूर्ण घट्ट, कमल के फूल इत्यादि सजावट की वस्तुएँ पाई गईं। प्रॉफ़ेसर बी बी लाल की खुदाईयों से यह भी पता चला कि स्तंभों पर बना हुआ वह ढाँचा बार-बार मरम्मत किया गया, कम से कम तीन बार।

प्रॉफ़ेसर बी बी लाल की खुदाईयों ने यह भी दिखाया कि वहाँ एक बहुत बड़ी दीवार थी क़िलेबंदी के लिए, जो बनाया गया था पकाए हुए ईंटों से और **जिसकी उम्र रही होगी ३ शताब्दियाँ ईसा के पहले। सोचें,** इस्लाम अभी तक जन्मा भी नहीं था।

अन्य शब्दों में कहा जाय तो वहाँ **बाबर के पहले** भी बहुत कुछ था, **जिन्हें झुठलाने में आज** जवाहरलाल नेहरु

विश्वविद्यालय एवं अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के इतिहासज्ञ जी तोड़ कर लगे हैं।

यह एक जानी और मानी हुई बात है कि पुरातात्विक खुदाई में भाग्य का साथ होना भी आवश्यक होता है। कहा जाता है कि केवल कई इंचों के लिए कोई छुपा ख़ज़ाना तक खो देता है। अर्थात, यदि कई इंच और खुदाई की होती तो संभवतः ख़ज़ाना हाथ लग जाता।

दक्षिण की तरफ़ प्रॉफ़ेसर बी बी लाल ने जो खाइयाँ खोदी थीं, उससे केवल १०-१२ फीट की दूरी पर एक बहुत बड़ी खुदाई छूट गई जिसमें ४० से अधिक प्रतिमाएँ बाद में पाई गई। पर प्रॉफ़ेसर लाल को मिले थे, १६वीं शताब्दी से पहले के तोड़े हुए मंदिर के स्तंभ, जो अन्य पुरातत्वज्ञों को नहीं मिल पाये थे।

ये ४० से अधिक प्रतिमाएँ तब पाई गईं जब उत्तर प्रदेश सरकार के अधिकारी पूर्व एवं दक्षिण के खाइयों के बग़ल की ज़मीन को समतल कर रहे थे। **बड़ी चर्चा रही इनकी समाचार पत्रों में** १८ जून १९९२ से।

यहाँ ध्यान दीजिए तारीख़ पर। जून १९९२। बाबरी ढाँचा अभी गिरा नहीं था। हमारे न्यायालय इन प्रमाणों की उपलब्धि से अनभिज्ञ नहीं थे।

२ जुलाई १९९२ को **पुरातत्वज्ञों का एक और दल** उस स्थान पर पहुँचा। इस दल में थे डॉ वाई डी शर्मा, जो सर्वेक्षण के उप मुख्य निर्देशक रहे थे, डॉ एस पी गुप्ता, जो इलाहाबाद संग्रहालय के संचालक रहे थे, और बहुत सारे वरिष्ठ पुरातत्वज्ञ भी वहाँ पहुँचे।

उन्होने हिंदू मंदिरों की उन ४० से अधिक कलाकृतियों व पुरातात्विक अवशेषों का परीक्षण किया। उन्होने पाया कि ये वस्तुएँ **१०वीं से १२वीं शताब्दी के बीच की थीं।** इन वस्तुओं में थीं कई आमलका जो उन दिनों की समस्त उत्तर भारतीय मंदिरों में (कोनार्क और खजुराहो) आज भी देखने को मिलती हैं। एक और वैसा ही आमलका पाया गया एक बार फिर (१ जनवरी १९९३ को) एक खाई में, जब उत्तर प्रदेश के सरकारी अधिकारी, फ़ैज़ाबाद के एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी की मौजूदगी में, मंदिर के चारों तरफ़ एक नया घेरा बना रहे थे।

और भी मूर्तियाँ पाई गईं जो थीं चक्र-पुरुष, परशुराम, मैत्री देवी, शिव व पार्वती की, जो १०वीं से १२वीं शताब्दी के बीच

की थीं। **ये सभी मूर्तियाँ उस धरती के नीचे नहीं मिल सकती थीं यदि वहाँ मस्जिद के पहले मंदिर न रहा होता।**

बाद के दिनों में, पूर्व के हिस्से में, **पुरातत्वज्ञों की एक और टोली** ने खुदाइयाँ की और उन्होने १० फीट से अधिक ज़मीन खोदी, पूर्व व दक्षिण की तरफ़, जहाँ सरकारी अधिकारियों ने कुछ हिस्से को काटा था।

इस दौरान पाया गया एक बहुत गहरा गड्ढा और अवशेष, कम से कम ३ ठूँसे हुए फ़र्शों की, जो थीं १०वीं से १६वीं शताब्दी के बीच की, और **एक फ़र्श जो थी १ली से ३री शताब्दी के बीच की। दो दीवारें पाई गईं जो १ली से ३री शताब्दी (ईस्वी) के बीच की बनी थीं।** प्रॉफ़ेसर बी आर ग्रोवर ने एक बहुत बड़ी और फैली हुई पके ईंटों की फ़र्श भी पाई। ध्यान दें, **बाबर भारत आया १६वीं शताब्दी** में।

इन सभी खुदाईयों से एक बात और स्पष्ट हुई। वह यह कि जन्मभूमि स्थान पर हिंदू मंदिर बनाए गए थे कई बार, केवल पिछले ४५० वर्षों को छोड़ कर, जब मुस्लिमों ने मंदिर तोड़ कर उस जगह बनाई एक मस्जिद, **जिसे मुसलमानों ने नाम दिया "जन्मस्थान-मस्जिद" का अपने ही लिखित प्रमाणों में।**

आप अपने आप से पूछिए - **जन्मस्थान किसका?** यदि बाबर का नहीं, आपका और हमारा नहीं, उन कॉम्युनिस्ट इतिहासज्ञों का नहीं जो बार-बार समाचार पत्रों में यह कहते नहीं थकते कि राम का नहीं - तो किसका जन्मस्थान? पैग़ंबर मुहम्मद का या फिर कार्ल मार्क्स का?

इन सभी खुदाईयों से एक बात और स्पष्ट हुई। वह यह कि अंतिम बार, जो आलीशान मंदिर पत्थरों से वहाँ बना होगा, वह रहा होगा **११वीं-१२वीं शताब्दी** का।

इसके सिवा कुछ अन्य मूर्तियों के आधार पर **निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है** कि उसी स्थान पर **९वीं-१०वीं शताब्दी का प्रतिहार शैली** का एक मंदिर रहा होगा, जबकि गढ़वालों के समय वहाँ एक नए एवं भव्य मंदिर के बनाने की चेष्टा की गई होगी जिसे, वस्तुतः, एक प्रकार से जीर्णोद्धार कहा जा सकता है।

इन सभी विषयों पर देश के वरिष्ठ पुरातत्वज्ञों की राय जानने के लिए और उन्हें एक अवसर देने के लिए कि **वे स्वयं इन प्रमाणों को देखें और इनको अपने हाथ में लेकर जाँचें और अपनी राय दें** - अयोध्या के तुलसी स्मारक भवन में देश के कोने-कोने से ४० पुरातत्वज्ञ सम्मिलित हुए **१० से १३ ऑक्टोबर**

(अक्तूबर) १९९२ के बीच। **मत भूलें** कि बाबरी ढाँचा अभी अपनी जगह पर अच्छा-भला खड़ा था।

उनमें सम्मिलित थे **मद्रास** से प्रॉफ़ेसर के वी रमन, **धारवाड़** से प्रॉफ़ेसर ए सुन्दरा, **बैंगलोर** से डॉ एस आर राव, **अहमदाबाद** से प्रॉफ़ेसर आर एन मेहता, **जयपुर** से श्री आर सी अग्रवाल, **सागर** से डॉ एस के पाण्डे, **नागपुर** से प्रॉफ़ेसर अजय मित्र शास्त्री, **बनारस** से डॉ टी पी वर्मा, **फ़ैज़ाबाद** से प्रॉफ़ेसर के पी नौटियाल, **पटना** से प्रॉफ़ेसर बी पी सिन्हा, **भोपाल** से डॉ सुधा मलैइया, **दिल्ली** से प्रॉफ़ेसर के एस लाल एवं दवेन्द्र स्वरूप, **इलाहाबाद** से प्रॉफ़ेसर वी डी मिश्रा, **रीवा** से प्रॉफ़ेसर आर के वर्मा, एवं अन्य अनेक जिनमें सम्मिलित थे वाई डी शर्मा, के एम श्रीवास्तव और एस पी गुप्ता जिन्होने अयोध्या में खुदाई एवं परीक्षण का कार्य किया था। **परीक्षण के पश्चात वे सभी एकमत हुए कि वहाँ, जन्मस्थान पर, निश्चयतः मंदिर था।**

६ दिसम्बर १९९२ अभी आया नहीं था। बाबरी ढाँचा अभी गिरा नहीं था। उसके गिरने की आवश्यकता भी नहीं थी। न्यायालय की सुनवाई समाप्त हो चुकी थी, बाबरी ढाँचे के गिरने से १ महीने पहले।

अब आप अपने आप से एक प्रश्न पूछिए

न्यायालयों के पास सारे देश के कोने-कोने से आए **४० पुरातत्वज्ञों के राय** उपलब्ध थे। उनकी सारी सुनवाई भी **४ नवंबर १९९२** को समाप्त हो चुकी थी।

फिर उन्होने न्याय क्यों नहीं दिया? यदि उन्होंने न्याय दिया होता तो क्या बाबरी ढाँचा गिरा होता? कौन था वास्तविक रूप से जिम्मेदार उस ढाँचे के गिरने का?

न्यायालय किसे कहते हैं? हाँ, न्यायालय इसे कहते हैं!

बात पुरानी है। हिंदुओं ने न्यायालय से अपील की थी। ४ वर्ष बीत चुके थे। **१९५५** में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने लिखा था कि "यह बड़े ही दुःख की बात है कि ४ वर्षों तक इस तरह की समस्या अनिर्णीत रही"। संदर्भ अरुण शोउरी पृ रोमन ६-११

अर्थात इलाहाबाद उच्च न्यायालय को **इस बात का ज्ञान था कि** यह समस्या अत्यंत महत्वपूर्ण है, और इसे इस प्रकार अनिर्णित रखना **किसी भी प्रकार से उचित नहीं।** १९५५ में

इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने जब वह बात कही थी तब केवल ४ वर्ष ही बीते थे।

देखते-देखते और भी ४० वर्ष बीत गए। न्यायाधीश भूल गए कि उन्हें वेतन मिलता है जनता के दिए हुए कर से। जब जनता न्याय माँगती है उनसे, तो उन्हें इसमें कोई रुचि नहीं।

आया जुलाई १९९२ और अब भी न्यायालय सुनवाई कर रही थी। शायद ऊँचा सुनते हैं इसलिए ४२ वर्ष बीत गए पर जनता की आवाज़ उनके कानों तक न पहुँची!

जुलाई १९९२ में कर सेवा आरंभ हुई तो अचानक सर्वोच्च न्यायालय की नींद टूटी। उन्होने उत्तर प्रदेश सरकार से कहा कि यदि वे कर सेवा रुकवा सकें तो सर्वोच्च न्यायालय इस मुकदमे को खुद अपने हाथों में ले लेगी और इसे पूरी तरह से निपटा देगी।

कर सेवा तो खैर रुक गई पर **सर्वोच्च न्यायालय भी अपनी ज़बान से मुक़र गई।** उन्होने गेंद फिर इलाहाबाद उच्च न्यायालाय की ओर फेंक दी, बोले जल्दी निपटाओ इसे। हिंदुओं ने सोचा कम-से-कम इस बार न्याय मिलेगा उन्हें।

तय किया ६ दिसंबर १९९२ को होगी कर सेवा। संयोग से इस बार इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने काम किया और

उनकी सुनवाई समाप्त हुई ४ नवंबर १९९२ को। **उनके पास पूरा १ महीना बाकी था निर्णय लेने को।**

उत्तर प्रदेश सरकार और दूसरों ने **बार-बार अपील की**, कि न्यायालय सुना दे अपना निर्णय, जो भी हो मंज़ूर उसे। **पर एक न्यायाधीश चला गया छुट्टी मनाने और निर्णय गया खड्डे में।**

६ दिसंबर १९९२ को वह ढाँचा गिर गया। उस ढाँचे को गिरने की आवश्यकता न होती यदि न्यायाधीश को छुट्टी अधिक प्यारी न होती।

आज न्यायाधीश बाबरी ढाँचा गिराने वालों को सजा देना चाहते हैं। **पर जिनकी अकर्मण्यता के कारण** यह ढाँचा गिरा, उन्हें कौन सजा देगा? ये न्यायाधीश दूसरों के लिए न्याय करते हैं। **जब ये स्वयं अन्याय करें तो इन्हें कटघरे में लाकर कौन खड़ा करे?**

डॉ कोएनराड एल्स्ट कहते हैं - "**इस बात को ध्यान में रखते हुए कि** ४२ वर्षों के इस अंत हीन मुकदमेबाज़ी के उपरांत, जिस प्रकार से, मूर्खता भरे अहंकार के साथ, इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने, पूर्व निर्धारित ६ दिसंबर की कर सेवा के, कुछ ही दिनों पहले, अपने निर्णय को एक बार फिर से ताक

पर रख दिया - **यह कतई उचित न होगा,** कि हम अति-उत्साही राम भक्तों को, उनके न्याय की प्रक्रिया के प्रति निरादर, के लिए दोष दें - **उस न्याय की प्रक्रिया के प्रति, जिसका यह दायित्व है कि वह लोकतांत्रिक व्यवस्था की मर्यादा को बनाए रखे।** निश्चय ही, उन्होने निरादर प्रकट किया है, न्यायालयों का राजनीतिक खेलों के लिए, अनुचित प्रयोग के प्रति। और, उन्होने बिल्कुल सही बग़ावत की है, **न्यायाधीशों के हिंदू समाज के प्रति, अवज्ञा के लिए** - वह अवज्ञा, जो साफ़ झलकती है, उनके इस विवाद को सुलझाने की अनिच्छा से, **वह भी ऐसा विवाद, जो राम जन्मभूमि जैसा महत्वपूर्ण हो**"। (उद्धृत - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ १२९)।

ग्यारहवीं शताब्दी का श्री विष्णु-हरि का शिलालेख जो स्पष्ट रूप से हमें बताता है कि यह मंदिर था श्री राम का

६ दिसंबर १९९२ को जब वह ढाँचा गिरा तो उसके मलबे से बहुत कुछ मिला जिसमें एक बहुत ही महत्वपूर्ण शिलालेख था, जो एक **अच्छा प्रमाण बन सकता था राष्ट्रपति के उस प्रश्न के उत्तर में** जो उन्होनें सर्वोच्च न्यायालय से पूछा था।

उस शिलालेख में २० पंक्तियाँ थीं। शिला ५ फ़ुट लंबी, २ फ़ुट चौड़ी, अढ़ाई इंच मोटी और बहुत ही भारी थी, जिसे ४ हट्टे-कट्टे कर-सेवक बड़ी कठिनाई से उठा पाए थे।

वह शिलालेख संस्कृत में, ११वीं सदी की नागरी लिपि में थी। यह शिला उस मंदिर के दीवार पर लगाई गई होगी जिसके निर्माण का वर्णन इस शिलालेख में मिलता है - **जिस मंदिर तोड़ कर** उसके ऊपर यह मस्जिद बनाई गई होगी।

१५वीं पंक्ति हमें स्पष्ट रूप से बताती है कि एक सुंदर मंदिर श्री विष्णु-हरि का, भारी पत्थरों से बनाया गया था।

१७वीं पंक्ति हमें बताती है कि यह सुंदर मंदिर, मंदिरों की नगरी अयोध्या जो कि साकेत-मंडल में था। यहाँ ध्यान दीजिए साकेत उस ज़िले का नाम हुआ करता था जिसका अयोध्या एक अंग था - अर्थात यह लिखावट **इसी अयोध्या के बारे में थी**, जिसकी हम चर्चा कर रहे हैं यहाँ।

१९वीं पंक्ति हमें बताती है भगवान श्री विष्णु, जिन्होने मानभंग किया राजा बलि का, व अंत किया दशानन रावण का। यह स्पष्ट रूप से हमें बताती है कि **यह मंदिर था श्री राम का**, जिन्होने अंत किया था रावण का (संदर्भ - डॉ एस पी गुप्ता, पृष्ठ ११७-१२०, उद्धृत - प्रॉफ़ेसर अजय मित्र शास्त्री (द

चेयरमैन ऑफ़ एपिग्राफ़िकल सोसायटी ऑफ़ इंडिया), *पुरातत्व* में (ऑफ़िशीयल जर्नल ऑफ़ इंडियन आर्किओलॉजिकल सोसायटी) नंबर २३ (१९९२-१९९३)।

डॉ एस पी गुप्ता हमें बताते हैं कि **बाबरी तरफ़ के प्रॉफ़ेसर आर एस शर्मा एवं अथार अली ने कहा था** कि जब तक, उन्हें उन दिनों का ऐसा कुछ लिखा हुआ नहीं दिखाया जाता, जो इस बात को दर्शाता हो कि वहाँ एक जमाने में राम मंदिर हुआ करता था, तब तक वे यह मानने को तैयार नहीं, कि वहाँ कोई हिंदू मंदिर रहा होगा। अब जब श्री विष्णु-हरि का शिलालेख मिला तो **ये कहने लगे कि यह शिलालेख जाली है।**

इस पर डॉ एस पी गुप्ता कहते हैं, कि हम अब भी अपनी बात दोहराते हैं, कि **आप बुलाइए विश्व के किसी भी कोने से किसी भी विशेषज्ञ को, और यदि परीक्षण के बाद वे कह दें कि यह शिलालेख जाली है,** तो हम दो लाख रुपये देने को तैयार हैं। इस चुनौती का वे कोई उत्तर नहीं देते (संदर्भ - डॉ एस पी गुप्ता, पृष्ठ १२०)।

ये जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय एवं अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के स्वनामधन्य मार्क्ससिस्ट इतिहासज्ञ **न तो किसी निरपेक्ष विशेषज्ञ को परीक्षण के लिए बुलाते हैं,** अपितु

समय-समय पर समाचार पत्रों में झूठा बयान अवश्य देते रहते हैं, जिससे लोग झूठ को सच मानते रहें।

डॉ कोएनराड एल्स्ट हमें बताते हैं, कि यदि ये अपने आप को धर्मनिरपेक्ष कहने वाले, सचमुच अपनी ही कही हुई बात पर विश्वास करते, तो अवश्य ही वे विदेशों से निरपेक्ष पुरातत्वज्ञों को बुला कर इस बात का भाँडा फोड़ सकते थे, कि सब जाली हैं, **पर उन्होने ऐसा नहीं किया। वह पूछते हैं ऐसा क्यों?** वह बताते हैं कि यह मामला तब **मंत्री अर्जुन सिंह** के अधिकार क्षेत्र में था, जो इस बात की तुरंत व्यवस्था करा सकते थे, क्योंकि वह भी इन लोगों की तरह अपने आप को धर्मनिरपेक्ष गुट का मानते थे। पर हुआ यह कि कपिल कुमार, बी डी चट्टोपाध्याय, **के एम श्रीमाली,** सुविरा जायसवाल और एस सी शर्मा ने ज़ोर शोर से इसे जाली क़रार दिया (संदर्भ - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ १८१-१८२)।

३ हज़ार घंटे सोचने के बाद सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय देखिए

मुस्लिम लीडरों ने दावा किया था कि यदि यह सिद्ध कर दिया जाए कि उस जगह पर मस्जिद के पहले एक मंदिर

हुआ करता था तो वे वह जगह हिंदुओं को दे देंगे। इस बात पर **चंद्र शेखर सरकार** ने यह तय किया कि **सारा निर्णय इस बात पर टिका होना चाहिए** कि क्या वहाँ मस्जिद के पहले मंदिर था? **भारत के राष्ट्रपति ने यही प्रश्न** सर्वोच्च न्यायालय से किया। छुट्टियों एवं गर्मी की छुट्टियों को छोड़ कर, सर्वोच्च न्यायालय के ५ न्यायाधीशों ने सप्ताह में ३ दिन, फ़रवरी से सितंबर १९९४ तक, मुकदमे पर सुनवाई की और अंत में निर्णय लिया कि हम उत्तर नहीं देना चाहते (संदर्भ - अरुण शोउरी, पृ रोमन १०)।

जरा सोचिए, ३,००० घंटे उन्होने बिताए इस बात पर और अंत में परिणाम लड्डू। **पूछिए ३,००० घंटे कैसे?** फ़रवरी से सितंबर तक ८ महीने होते हैं। **५ न्यायाधीश** गुणा ८ महीने, गुणा ४ सप्ताह प्रति महीने, गुणा ३ दिन प्रति सप्ताह, गुणा ७ घंटे प्रति दिन, कुल ३,३६० घंटे। इस में से माना कि ३६० घंटे उनकी छुट्टियों के। बाकी रहे ३००० घंटे।

भारत के राष्ट्रपति को उत्तर दिया सर्वोच्च न्यायालय के **३ न्यायाधीशों** ने। उनके नाम थे मुख्य न्यायाधीश एम एन वेन्कटाचालिआह, न्यायाधीश जे एस वर्मा, न्यायाधीश जी एन रे। **हम बड़े आदर के साथ जवाब देना अस्वीकार करते हैं और इसे आपको वापस भेजते हैं।** पैरा १००(११) उनके न्याय

का। उन तीनों ने अपने इस न्याय पर नई दिल्ली में २४ अक्टूबर १९९४ को हस्ताक्षर किए थे (संदर्भ - द सुप्रीम कोर्ट जजमेंट, पृ ६४)।

भारत के राष्ट्रपति को उत्तर दिया सर्वोच्च न्यायालय के अन्य **२ न्यायाधीशों** ने। उनके नाम थे न्यायाधीश ए एम अहमदी, न्यायाधीश एस पी भरूचा। **राष्ट्रपति को हम वापस करते हैं आदर के साथ, बिना उत्तर दिए।** पैरा १६५ उनके न्याय का। उन दोनों ने अपने इस न्याय पर नई दिल्ली में २४ अक्टूबर १९९४ को हस्ताक्षर किए (संदर्भ - द सुप्रीम कोर्ट जजमेंट, पृ ८८)।

राजनयिक नेता जो जनमत तैयार करते हैं, क्या उनका यह कर्तव्य नहीं था कि वे इन तथ्यों को बार-बार जनता के सामने लाते? यह न करके उन्होने जनता को बार-बार यही कहा कि **हमें सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का अनुसरण करना चाहिए।** वह निर्णय जो कोई निर्णय ही नहीं था। हमारे राज नेता चाहते हैं कि **हम भागते रहें, इस मृगमरीचिका के पीछे, तब तक, जब तक हम थक हार कर बैठ न जाएँ।**

भारत के राष्ट्रपति ने सर्वोच्च न्यायालय से **क्या पूछा** था? **बस यही कि क्या वहाँ मस्जिद के पहले मंदिर हुआ करता**

था? सर्वोच्च न्यायालय ने **क्या कहा** - हम उत्तर नहीं देगे। **कब कहा**, ३,००० घंटे सोचने के बाद।

इसे बड़े सुंदर ढंग से, पंजाब उच्च न्यायालय के, अवकाश प्राप्त मुख्य न्यायाधीश एम रामा जॉयस ने, (राष्ट्र के संविधान के धारा १४३(१) के अंतर्गत राष्ट्रपति के विशेष संदर्भ संख्या १/१९९३ का उद्धरण देते हुए), कहा - **सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय किया, कि वे निर्णय नहीं करेंगे** (संदर्भ - एम रामा जॉयस, पृ ९६)।

कितना सुंदर निर्णय था हमारे सर्वोच्च न्यायालय का। न्याय हो तो ऐसा। इतिहास के पन्नों पर सुनहरे अक्षरों में लिखा जाना चाहिए इसे। **यह न्याय प्रणाली हमें ईसाई-अँग्रेज़ों ने दी थी,** हिंदू न्याय प्रणाली का उन्मूलन कर (मैकॉले १८३५ ईस्वी)।

अब तक हमने देखी हमारे सर्वोच्च न्यायालय की मुस्तैदी, **४४ साल और ८० करोड़ हिंदुओं की भावनाओं की क़ीमत, इन न्यायाधीशों की नज़रों में।** और अब देखिए जब इनकी पीठ पर लात पड़ती है तो कितना दर्द होता है इन्हें।

अभी की बात है, मुख्य न्यायाधीश ने कहा - जब समाचार पत्रों ने, कामवासना के कलंक के संदर्भ में, कई न्यायाधीशों

का नाम उछाला, तो **मैं कई रातों तक सो नहीं सका** (संदर्भ - द फ़्री प्रेस जर्नल, मुंबई संस्करण, २९ मार्च २००३, पृ ३)।

मज़े की बात तो यह है, कि तुरंत तहक़ीक़ात की गई। **उन्होने ५० साल नहीं लिए, क्योंकि कालिख उनके मुँह पर आन पड़ी थी।**

पर जब प्रश्न उठता है ८० करोड़ हिंदुओं की भावनाओं का, तो ४४ तो क्या उसके बाद और ८ वर्ष और बीत चुके हैं, पर सर्वोच्च न्यायालय तो यही सोचती - **हम हैं सर्वोच्च, अतः हमारी मर्ज़ी, हम लें ५२ साल या १०० साल, कौन पूछने वाला हमें?**

एक बार फिर वही खेल-तमाशा - इस बार उच्च न्यायालय द्वारा

इलाहाबाद उच्च न्यायालय के आदेश पर, एएसआई (आर्किऑलॉजिकल सर्वे ऑफ़ इंडिया अर्थात भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग) ने **एक बार पुनः खुदाईयाँ की,** और **२५ अगस्त २००३** को अपना ५७४ पृष्ठों का रिपोर्ट इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया। इस रिपोर्ट के अनुसार,

उस विवादास्पद स्थान पर, **एक पुरातन मंदिर का पाया जाना, एक बार फिर सिद्ध होता है।**

तब से आज तक **कई वर्ष बीत चुके हैं पर न्यायालय अभी तक सोच ही रही है!** मुझे अच्छी तरह याद है कि उन दिनों, अर्थात २५ अगस्त २००३ के पहले, बार-बार लगातार कुछ दिनों के अन्तर पर, इलाहाबाद उच्च न्यायालय हमारे भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग को अंतिम चेतावनी दिया करती थी कि **जल्दी खत्म करो अपनी खुदाई** इतने दिनों के अंदर। पर जब एक बार रिपोर्ट हाथ में आ गई और एक बार पुनः यह बात सिद्ध हुई कि वहाँ मंदिर था मस्जिद के पहले, एवं **इसके अनुसार राम जन्म भूमि हिंदुओं के हवाले कर दी जानी चाहिए** तो अचानक हमारी न्यायालयों ने **एक बार पुनः कुम्भकर्ण निद्रा की शरण ली।**

कहीं ऐसा तो नहीं कि जब उच्च न्यायालय ने भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग को फिर से खुदाई करने का आदेश दिया तो **उन्हें ऐसी आशा रही होगी** कि १९७५ से आरम्भ कर अगले बीस वर्षों तक अनेक बार खुदाई हो चुकी है और जो कुछ धरती के नीचे रहा होगा उसे अब तक अवश्य खोद कर निकाल लिया गया होगा एवं **अब और निकालने को शायद कुछ भी बचा न होगा।** इस प्रकार पर्याप्त प्रमाण के अभाव में

हिंदुओं को एक बार फिर अपने अधिकार से वंचित कर देना सहज होगा।

जब भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने खुदाई आरम्भ की तो धीरे-धीरे कुछ और प्रमाण सामने आने लगे। तब नए आरोप लगाये गए एवं कहा गया कि **मुसलमान मज़दूरों को खुदाई के काम में लगाना चाहिए।** वह बात भी मान ली गई।

इन सबके बावज़ूद सत्य छिपाया न जा सका। फिर भी न्यायालयों ने इस विषय को एक बार फिर से ताक पर रख दिया। कितना सुन्दर एवं सहज है न्याय की यह प्रक्रिया जो वे ईसाई-अँग्रेज़ हमें विरासत में दे गए!

न्यायाधीशों के आचरण हमें बताते हैं कि उन्होंने निर्णय कर रखा है कि उन्हें किसका पक्ष लेना है - सत्य का या असत्य का, न्याय का या अन्याय का, सत्ता का या जनता का, धन रूपी पुरस्कार का या निर्धन के आशीर्वाद का।

देर-सवेर **जनता को भी एक निर्णय लेना होगा**। क्या करना है ऐसे न्यायाधीशों का?

उसे मस्जिद क्यों कहते हैं हमारे ये समाचार पत्र?

फ़ैज़ाबाद के न्यायाधीश ने ३ मार्च १९५१ (**ध्यान रहे, ४१ वर्ष के पश्चात १९९२ में बाबरी ढाँचा गिरा**) को न्यायालय के लिखित प्रमाणों में लिपिबद्ध किया कि **अयोध्या के मुस्लिम निवासियों ने शपथपत्र पर यह लिख कर न्यायालय को दिया** कि कम से कम १९३६ से उस ढाँचे का **मस्जिद के रूप में प्रयोग नहीं किया गया, न ही वहाँ कोई नमाज़ अदा की गई।** न्यायाधीश ने यह भी लिपिबद्ध किया था कि ऐसा कुछ भी उनके सामने **नहीं लाया गया जो उन शपथपत्रों को झूठा सिद्ध कर सके** (संदर्भ - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ १६८-१६९)।

अँग्रेज़ों के समय से, **१९३६** के बाद, उस जगह पर कभी नमाज़ न अदा की गई। **जिस जगह पर ५७ वर्षों से नमाज़ न अदा की जाए वह जगह मस्जिद नहीं रहती,** वह एक स्मारक बन कर रह जाता है। **१९४९** में हिंदुओं ने उस ख़ाली ढाँचे को, जिसे आज **हमारे समाचार पत्र और राजनीतिज्ञ बाबरी मस्जिद कहते नहीं थकते,** हिंदू मंदिर के रूप में उपयोग में लाना आरम्भ किया।

वह ढाँचा जिसे हम बाबरी मस्जिद कहते हैं और जो पिछले ४४ वर्षों से एक मंदिर बना रहा, उसे मंदिर का आवरण देना **स्वाभाविक** ही होता। इसीलिए हिंदू चाहते थे कि इस मस्जिदनुमा ढाँचे को, जो अब ५७ वर्षों से मस्जिद न रहा, **बल्कि ४४ वर्षों से अब एक मंदिर बन चुका था, उसे मंदिर का चेहरा दिया जाए। क्या दोष था इसमें?** (संदर्भ - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ १४८-१४९)?

बड़े समाचार पत्र जो जनमत तैयार करते हैं, क्या उनका यह कर्तव्य नहीं था कि वे इन तथ्यों को बार-बार जनता के सामने लाते कि अब वह मस्जिद न रहा था?

इसके विपरीत, उन्होने जनता को बार-बार बाबरी मस्जिद का नाम लेकर **यह एहसास दिलाया** कि वह मस्जिद (**इबादत की जगह** अर्थात पूजा का स्थान) ही था।

उसे बाबरी मस्जिद कहते-कहते हमारे समाचार पत्रों ने जो छवि सबके मन में आँकी है, वह है एक मस्जिद की, जिसे ढहा दिया हिंदुओं ने।

पूछिए इन बड़े-बड़े समाचार पत्रों के दिग्गजों से कि कितना धन आता है अरब देशों से **उनके ईमान को खरीदने के लिए**

ताकि वे अपनी लेखनी की चतुराई से असत्य को सत्य का जामा पहना सकें।

पूछिए इन दिग्गजों से कि वे सदा राजनीतिज्ञों में व्याप्त भ्रष्टाचार की बातें क्यों करते हैं - क्या इसलिए कि **उनकी अपनी भ्रष्टाचार की ओर** जनता का ध्यान न जाये?

सत्य यह है कि हिंदुओं ने एक **मस्जिद (मुसलमानों के इबादत की जगह) नहीं,** बल्कि **पिछले ४४ वर्षों से हिंदू मंदिर के रूप में प्रयोग किए जाने वाले एक ढाँचे** को गिराया था, जहाँ पिछले ५७ वर्षों से कभी नमाज़ नहीं पढ़ी गई थी।

अतः उसे मस्जिद का नाम देने की भूल न करें, क्योंकि मस्जिद के नाम से जुड़ी होती है छवि, एक पूजा के स्थान की। सही नाम का प्रयोग अत्यंत आवश्यक है। **इसकी उपेक्षा न करें क्योंकि यह हमारी सोच को सही, या ग़लत दिशा देती है।**

कहाँ खो गई उनके अंतःकरण की आवाज़?

हिंदुओं ने तो केवल **नाम-मात्र के एक मस्जिद** का ढाँचा गिराया था, वह भी **वर्षों के अन्याय को चुपचाप सहते रहने**

के बाद - अन्याय जो यवनों ने किया, अन्याय जो राष्ट्र की स्वतंत्रता के पश्चात धर्मनिरपेक्षता की आड़ में हमारे अपनों ने किया, अन्याय जो हमारी न्यायालयों ने किया अपनी अकर्मण्यता के द्वारा।

एक नाममात्र का मस्जिद जहाँ **पिछले ५७ वर्षों से न तो नमाज़ पढ़ी गई न उसका मस्जिद के रूप में प्रयोग किया गया, अपितु पिछले ४४ वर्षों से वह इमारत हिंदू मंदिर के रूप में प्रयोग में लाई जाती रही।** उस ढाँचे को एक **हिंदू मंदिर का उचित स्वरूप देने** के लिए गिराया गया। यह तो १९९२ की पुरानी बात है, अब तुलना कीजिए इन तथ्यों की, निम्न लिखित सच्चाइयों से, **जो उसके पश्चात घटीं,** मुस्लिम राष्ट्रों में **जहाँ मुसलमानों ने एवं मुस्लिम सरकारों ने ऐसे मस्जिदों को ढहा दिया जहाँ तब भी नमाज़ पढ़ी जाती थी।** पूछिए इन मीडिया के दिग्गजों को एवं स्वनामधन्य बुद्धिजीवियों को कि कहाँ खो गई उनके **अंतःकरण की वह आवाज़ जिससे प्रेरित होकर** उन्होंने हिंदुओं के विरुद्ध इतना जहर उगला था?

१२ दिसंबर २००१ - कोसोवा की शिया न्यूज़ ने सूचना दी कि **सउदी वहाबी कर्मियों** ने बुल्डोज़र लाकर ज़ाकोविका के

मस्जिद व क़ुरान स्कूल को ढहा दिया (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ ५)।

हमारे राम भक्तों ने तो **जोश में आकर**, सदियों के **अन्याय का विरोध करते हुए**, एक ढाँचे को गिराया जो मुस्लिमों के इबादत की जगह न रही थी, बल्कि हिंदुओं के पूजा का स्थान बन चुकी थी। पर यहाँ तो विश्व के **सबसे कट्टर (सऊदी अरब के) मुसलमानों ने**, स्वयं बुल्डोज़र लाकर, **सोची समझी योजना के अनुसार**, एक वास्तविक मस्जिद एवं मदरसे को तोड़ा!

जून २००२ - दक्षिण-पूर्व एशिया के **स्वाधीन** सुलु की **राजधानी** जोलो के **मुख्य मस्जिद** को ढहा देने की आज्ञा दी वहाँ के **राज्यपाल** नूर मिसौरी ने। यह मस्जिद उस द्वीप-प्रदेश का **ऐतिहासिक चिह्न** हुआ करता था जहाँ **अतीत एवं वर्तमान** के सभी परंपरागत नेता एवं नए सरकारी अधिकारी अपने **धार्मिक संगठन** का कार्य **प्रारंभ** किया करते थे (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ ५)।

यहाँ हम देखते हैं कि एक प्रमुख मुसलमान अधिकारी एक बहुत ही महत्वपूर्ण मस्जिद को तोड़ने से न झिझका। पर जब रामभक्तों ने मस्जिद नहीं बल्कि एक ढाँचे को गिरा दिया तो अचानक हमारे न्यायाधीशों का अंतःकरण **ग्लानि से भर गया!**

हमारे **सर्वोच्च न्यायालय** ने इसे **'राष्ट्रीय लज्जा'** की बात कहकर **हिंदुओं को** इतनी **फटकार दी,** पर न्याय न दिया! ३,००० घंटे सोचने के बाद भी निर्णय न लिया। अपने वचन तक से **मुक़र** गए।

तब कहाँ खो गई थी **उनके अंतःकरण की आवाज़?** क्या केवल हम हिंदुओं ने ठेका ले रखा है सब बलिदान करने का? ये न्यायाधीश **जो हमें सीख देते हैं,** उनके अपने आचरणों की झलक तो देखी ही है आपने इस पुस्तक में।

जनवरी २००४ - पाकिस्तान के समाचार पत्र द डॉन ने लिखा कि **सरकारी अधिकारियों** ने एक बनते हुए **मस्जिद** को तुड़वा दिया क्योंकि वह स्थान एक **उपवन** के लिए रखा गया था (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ ५)।

मुस्लिम राष्ट्र पाकिस्तान में एक **उपवन**, एक मस्जिद से **अधिक महत्व** का हो सकता है, पर **हम हिंदुओं के राष्ट्र में** वह ढाँचा, जो ५७ वर्षों से मस्जिद न रहा, हमारे **श्री राम के जन्मस्थान** से अधिक महत्व का हो गया! यह सोच है हमारे **आदरणीय(?) न्यायाधीशों** की। क्या वे सब वास्तव में आदर के पात्र हैं?

हमें संविधान न दिखाइए कि उसके अनुसार हम धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र हैं। वह संविधान जो **इन्हीं हिंदू विरोधी लोगों ने लिखा**, क्योंकि वे चाहते थे इस सनातन सत्य को झुठलाने की, कि जब तक मानव समाज की याददाश्त जाती है तब से यह भारत देश रहा है एक हिंदू राष्ट्र।

कुछ अँग्रेज़ी पढ़े लिखे मैकाले-मुलर-नेहरु-पुत्रों और मुस्लिम-ईसाई-वोट के लोभी राजनीतिज्ञों की इच्छा से यह कुछ और नहीं बन जाएगा। यह रहेगा हिंदू राष्ट्र ही। चाहे आपको शर्म आती हो यह कहने में, मुझे नहीं आती कि **मैं हिंदू हूँ** और यह मेरा देश है। हिंदू राष्ट्र **जिसने पनाह दी** मुसलमानों को, ईसाइयों को, और उन्हींने आगे चलकर **छुरा भोंका** हम हिंदुओं की **पीठ पर**, और इतिहास भी गवाह है इसका।

औरंगज़ेब जिसने हिंदू मंदिरों को तुड़वाने का प्रण ले रखा था, जिसके कारण **१८वीं सदी में सूरत से लेकर दिल्ली तक एक भी हिंदू मंदिर न बचा था**, उसी औरंगज़ेब ने स्वयं गोलकुंडा के जामा मस्जिद को तुड़वा दिया।

वहाँ का जागीरदार कर (टैक्स) इकट्ठा करता रहा पर उसने उसे औरंगज़ेब के राजकोष में नहीं जमा कराया। उसने धन को ज़मीन में गाड़ दिया और उसके ऊपर एक आलीशान मस्जिद बनवा दिया। **धन वसूल करने के लिए औरंगज़ेब ने**

जामा मस्जिद को तुड़वा दिया (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ ५)।

जामा-मस्जिद का अर्थ है नगर की सबसे बड़ी एवं पुरानी मस्जिद जहाँ नमाज़ पढ़ी जाती है (संदर्भ - डॉ हरदेव बाहरी, पृष्ठ ३००)।

यहाँ हम देखते हैं कि **धन जामा-मस्जिद से अधिक महत्वपूर्ण हो सकता है औरंगज़ेब जैसे कट्टर मुसलमान के लिए,** पर एक ढाँचा जो ५७ वर्षों से मस्जिद न रहा था, वह श्री राम के जन्मस्थान से अधिक महत्वपूर्ण हो गया, इन न्यायाधीशों के लिए, इन मीडिया के दिग्गजों के लिए, एवं इन राजनीतिज्ञों के लिए! यह तो है **उनका विवेक** एवं उनका **नीति ज्ञान** जो है इस ईसाई-अँग्रेज़ी शिक्षा पद्धति की देन!

इब्न सउद ने मदीना का प्रसिद्ध मस्जिद तोड़ा - १९२० में वहाबी शासन के इब्न सउद ने मदीना का प्रसिद्ध ज़नत उल बाक़ी मस्जिद को तुड़वा दिया (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ ५)।

मक्का और **मदीना** का नाम तो आपने सुना ही होगा हज़रत मुहम्मद के संदर्भ में। उस मदीना के प्रसिद्ध मस्जिद को तुड़वाना गलत नहीं था **मुसलमानों की नज़रों में।**

आज ये न्यायाधीश एवं मीडिया दिग्गज कहेंगे, चाहे उन्होंने ने सदियों पहले गलती की हो, हम तो उसे नहीं दोहरा सकते, पर वे नहीं झिझकेंगे नई ग़लतियाँ स्वयं करने से, **जो आज वे कर रहे हैं, हिंदू समुदाय के प्रति, अपने सतत अन्याय से।**

चीन की सरकार ने मस्जिद तोड़ा - ९ ऑक्टोबर २००१ - चीनी सरकार के काराकाश ज़िले के अधिकारियों ने डोएंग मस्जिद तुड़वा दिया क्योंकि वहाँ के **मुसलमान तुर्किस्तान की माँग** करने लगे थे (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ ५)।

मुसलमान जहाँ भी रहते हैं उसे दार अल-इस्लाम (मुसलमानों का वतन) बनाने की उधेड़ बुन में लगे रहते हैं। आज कश्मीर व केरल में यही हो रहा है। धीरे-धीरे वे हिंदुओं को काट कर फ़ेंके दे रहे हैं। चीन में भी उन्होनें वही चेष्टा की।

पर चीनी उनसे ज़्यादा उस्ताद थे, हम हिंदुओं की तरह भले मानुष नहीं। **हम भूल जाते हैं कि भला होना ही पर्याप्त नहीं, भले होने के पीछे ठोस कारण चाहिए। आवश्यकता से अधिक भला बनने की चाहत में हम अपना ही बुरा कर बैठते हैं।** उदाहरण प्रस्तुत है आपके सामने -

सिद्धराजा जयसिम्ह एवं उनके उत्तराधिकारी, गुजरात में, मुसलमानों को रहने एवं इबादत (पूजा) के लिए संरक्षण देते रहे। गुजरात के अनेकों नगरों में, मुसलमानों की संख्या और उनकी मस्जिदें बढ़तीं रहीं, जिसके साक्षी हैं अनगिनत शिलालेख, ख़ासकर खम्बाट, जूनागढ़ और प्रभासपतन, **जिन पर तारीख़ें खुदीं हैं १२९९ ईस्वी के पहले की, जबकि गुजरात मुसलमानों के आधिपत्य में आया १२९९ ईस्वी के पश्चात, उलुघ ख़ान के आक्रमण के बाद।** ऐसा लगता है कि दुकानदार, व्यापारी, नाविक और इस्लाम के धर्मप्रचारक संतुष्ट नहीं थे उससे, जो संरक्षण मिलता रहा उन्हें, हिंदू राजाओं के शासन-काल में। **वे प्रतीक्षा करते रहे उस दिन की जब यह दार अल-हर्ब बन जाएगा दार अल-इस्लाम। दार अल-हर्ब है काफ़िरों का वह राष्ट्र जिसके ख़िलाफ़ हर मुसलमान लड़ने को बाध्य है** (कुरान और हदिस के अनुसार)। 'दार अल-इस्लाम' है मुसलमानों का अपना वतन। संदर्भ - श्री सीता राम गोयल, पृष्ठ ३५-३६

बर्मा के बौद्धों ने ढेरों मस्जिद एवं मदरसे तोड़े। उदाहरण के लिए (१) क्याइक्डोन - मस्जिद के अंदर का भाग व मुस्लिम स्कूल तोड़ा एवं मुसलमानों को निकाल दिया **यदि उन्होने बौद्ध धर्म स्वीकार न किया** (२) गॉ बे - मस्जिद तोड़ा (३) नॉ बू - मस्जिद तोड़ा और सारे गाँव वालों को निकाल दिया (४)

डे न्गा इन - मस्जिद तोड़ा (५) क्याउंग डॉन - मस्जिद तोड़ा पर गाँव वालों को रहने दिया (६) कनिन्बू - मस्जिद व मुस्लिम स्कूल तोड़ा (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ ५)।

कहते हैं कि बौद्ध धर्म **बड़े शांति और अहिंसा** का धर्म हुआ करता है!

इज़राएल सरकार ने नाज़ारेथ में मस्जिद की नींव तुड़वा दी कारण यह मस्जिद ईसाइयों के धार्मिक स्थान के बहुत पास था जिससे ईसाइयों और मुसलमानों में तनाव बढ़ता जा रहा था (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ ५)।

ईसाई पोप नाज़ारेथ में मस्जिद तुड़वाने का समर्थन करते हैं पर अयोध्या की घटना पर हिंदुओं की भर्त्सना करते हैं। क्या न्याय ईसाई के लिए अलग और हिंदू के लिए अलग होता है? यह कैसे धर्म गुरु हैं? यह कैसा धर्म जिसका आधार न्याय न हो?

जब बाबरी ढाँचा गिरा तब से अनेक वर्ष बीत चुके हैं। उसके बाद भी विश्व के अन्य स्थानों पर कितने ही **वास्तविक मस्जिद** तोड़े गए। पर आज २५ जुलाई **२००३** के समाचार पत्र (संदर्भ - द फ़्री प्रेस जर्नल, मुंबई संस्करण, प्रथम पृष्ठ) बताते हैं, कि हमारी सोनिया गांधी कहती हैं, कि जब तक बाबरी मस्जिद

तोड़ने वालों को दंड नहीं मिल जाता तब तक हम चैन से नहीं बैठेंगे और हमारा युद्ध चलता ही रहेगा।

अर्थात वे चाहती थीं कि **लोग न भूल पाएँ इस झगड़े को।** वे चाहती थीं कि लोग लड़ते रहें इस बात पर। वे हवा देना चाहती थीं इस समस्या को जो बरसों पहले बीत चुका था। उन्हें क्या मिलता इससे? **मुसलमानों के वोट**। वे बता रहीं थीं मुसलमानों को कि हम हैं तुम्हारे एकमात्र हमदर्द। चाहे सउदी अरब के मुसलमान तोड़ दें मस्जिद, चाहे पाकिस्तान, चीन, इज़राएल की सरकारें तोड़ें मस्जिद और कोई कुछ न कहे, पर हम हैं तुम्हारे साथ। हमारा सहारा लो, **बरसों पुरानी बात न भूलो, बस लड़ते रहो** और हमें हमदर्द मान, अपना वोट देते रहो। क्या वे सफल रहीं अपनी इस चेष्टा में? हाँ, **२००४** के इलेक्शन में देश की बागडोर उनके हाथ में आ गई।

क्या व्यर्थ ही बहा था, एक लाख अस्सी हज़ार हिंदुओं का लहू?

हैमिल्टन ने लिपिबद्ध किया - **बाबरी मस्जिद बना था गारे के साथ हिंदू मृतकों के रक्त और चर्बी से।** संदर्भ - एम वी कामथ, पृ ४

श्री राम जन्मभूमि मंदिर के बारे में गिरीश मुंशी लिखते हैं - **दो फ़क़ीरों के उकसाने पर बाबर ने** अपने सेनापति को आक्रमण करने के लिए कहा। सेनापति का विरोध किया हंसबर के राजा विजय सिंह ने, मकरियाह के राजा संग्राम सिंह ने और भिटी के राजा मोहबत सिंह ने। संदर्भ - एम वी कामथ, पृ ४

ब्रिटिश इतिहासज्ञ **कन्निंघम** लिखते हैं - **हिंदुओं ने एक जुट होकर सामना किया अपने श्री राम जन्मभूमि मंदिर के लिए। १ लाख ८० हज़ार हिंदू मारे गए।** मुसलमान मृतकों की संख्या उपलब्ध नहीं। अंत में मीर बाक़ी ने मंदिर को अपने तोप से उड़ा दिया। संदर्भ - एम वी कामथ, पृ ४

जिन मुस्लिम **फ़कीरों सूफ़ी संतों** को आजकल बड़ी **गरिमा प्रदान** की जाती है हमारी **मीडिया के द्वारा**, उन्हीं सूफ़ी

फ़कीरों का ज़िक्र आपको अक्सर मिलेगा **हिंदू मंदिरों को तुड़वाने में सक्रिय भूमिका** निभाते हुए।

आज अधर्मियों का प्रभाव **इतना बढ़ गया है** कि हर वह व्यक्ति या घटना जो हिंदू धर्म का नाश कर सके उसे गरिमा प्रदान करने की **अथक चेष्टा की जाती है**।

बाकी विश्व में क्या हो रहा है?

डॉ कोएनराड एल्स्ट हमें यह भी बताते हैं कि **आज दुनिया भर में,** ऑस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैड, अमरिका में, **वहाँ की सरकारें और वहाँ के न्यायाधीश,** वहाँ के आदि-निवासियों के अपने धार्मिक स्थानों पर उनके पूजा करने का **अधिकार स्वीकार कर रहे हैं** (संदर्भ - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ १८८)।

तो फिर हमारे न्यायाधीश, हमारे बुद्धिजीवी, हमारे समाचार पत्र एवं हमारी सरकार इससे कतराती क्यों हैं? क्या उन्हें सच्चाई मालूम नहीं? या वे जान बूझकर सच्चाई से मुख मोड़े रहना चाहते हैं?

क्या ये सभी उसी ईसाई-अंग्रेज़ी शिक्षा पद्धति की पैदावार नहीं है जो **उन्हें बचपन से धीरे-धीरे अ-हिंदू या/एवं हिंदू-**

विरोधी बनाने में सतत प्रयत्नशील रहती है? यह बिसात इतनी खूबसूरती से बिछाई जाती है कि उन्हें इस बात का इल्म (ज्ञान) तक नहीं होता कि उन्हें क्या से क्या बनाया जा रहा है।

चन्द्रशेखर सरकार जिसने कुछ चेष्टा की इस दिशा में कि हिंदुओं को न्याय मिले उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर, **उसे शीघ्र ही गिरा दिया गया**। अधर्म के पक्षधर कभी भी धर्म के पक्षधरों को **अधिक समय तक** अपने पाँवों पर खड़े रहने नहीं देते क्योंकि उन्हें सर्वदा इस बात का भय लगा रहता है कि **कहीं धर्म के पक्षधर शक्तिशाली हो गए** तो वे अधर्म का अस्तित्व मिटा देंगे।

अतः धर्म के पक्षधरों के हित में यही होगा कि वे **कभी भी अधर्म को अनदेखा न करें।** यदि वे **क्षमा करने में अपना बड़प्पन मानेंगे** एवं **अधर्म को पनपते देते रहेंगे** तो एक दिन यही अधर्म सक्षम होकर **धर्म के अस्तित्व को ही मिटा देगा।**

युधिष्टिर की विडम्बना

धृतराष्ट्र एवं युधिष्ठिर लगातार दुर्योधन के अन्याय पूर्ण कार्यों को अनदेखा करते रहे और इस प्रकार, **परोक्ष रूप से अन्याय को प्रश्रय देते रहे।**

अंत में इसका परिणाम हुआ महाभारत का युद्ध, **जिसे टाला जा सकता था** यदि अन्याय का तिरस्कार एवं न्याय की प्रतिष्ठा **समय रहते की जाती।**

क्या आज हमारे बुद्धिजीवी, हमारी मीडिया, हमारे न्यायालय एवं हमारी सरकार **उसी धृतराष्ट्र की भूमिका** नहीं निभा रही है? क्या आज **आप स्वयं उसी युधिष्टिर की भूमिका** नहीं निभा रहे हैं?

अंत में पाँडवों ने दुर्योधन से क्या माँगा था? दे दो हमें केवल पाँच गाँव हम पाँचों के लिए, **हम नहीं चाहते रक्तपात!** पर उस दुर्बुद्धि दुर्योधन और उसके सलाहकार मामा शकुनि को वह भी स्वीकार्य न था। **बिना युद्ध के,** सुई की नोक के बराबर ज़मीन देने को भी तैयार न हुए वह। आज मुसलमानों की सोच भी तो यही है!

दुर्योधन दंभी बन गया था इतना कि पाँडवों की **विनम्रता को** उसने पाँडवों की **निर्बलता समझने की भूल की।** यही तो स्थिति है आज, हिंदुओं के विनम्रता की। मुसलमानों ने हिंदुओं की विनम्रता को उनकी **कमज़ोरी मान लिया है।**

हाँ एक अंतर अवश्य है। पाँडव एकजुट थे और हिंदू बँटे हुए हैं। **उन्हें बाँट कर रख दिया है** पिछली **छः पीढियों** की ईसाई-अँग्रेज़ी शिक्षा ने। इसकी बुनियाद रखी गई थी प्राचीन हिंदू शिक्षा पद्धति का **योजनाबद्ध रूप से समूल उन्मूलन कर।**

उससे भी बड़ी खूबी यह रही है कि उसी ईसाई-अँग्रेज़ी शिक्षा पद्धति का अत्यन्त चतुराई से प्रयोग कर **उन्होंने हम हिंदुओं को यह मानना सिखा दिया कि** हम बँटे हुए हैं **जाति प्रथा के कारण** एवं **अपनी ही कमजोरियों के कारण**।

जो कुछ भी था हमारे इतिहास में अपने अतीत पर गर्व करने लायक, उन सब को इतिहास की **पाठ्यपुस्तकों से मिटा दिया गया**। बड़े ही योजनाबद्ध रूप से **हमारी प्रत्येक पीढ़ी को** अपनी पिछली पीढ़ी से अधिक **हीन भावना से ग्रस्त कर दिया गया।**

"हमें शांति चाहिए" - कहीं यह तुम्हारी भ्रांति तो नहीं? सच्ची शांति तो केवल उसे हासिल होती है जो शक्तिशाली होता है। निर्बल तो केवल भ्रम में जीता है!

क्या आवश्यकता थी भगवान श्री कृष्ण को, **कुरुक्षेत्र की युद्धभूमि में** दुबके हुए अर्जुन को ललकारने की? हे पृथा के पुत्र अर्जुन, **तुझे नामर्द नहीं बनना है।** ऐसा तेरे लिए कतई योग्य नहीं है। हे परंतप, **हृदय की इस तुच्छ दुर्बलता का त्याग कर** अब तू युद्ध के लिए तैयार हो जा। श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय २ श्लोक ३

श्री राम का मन्दिर तो निमित्त मात्र है! प्रश्न यह है कि तुममें धर्म की रक्षा हेतु उठ खड़े होने की मानसिक इच्छा एवं शारीरिक योग्यता है, कि नहीं!

वह निर्बल जो सत्य-असत्य में अंतर नहीं कर पाता, वह दुबका हुआ जिसे उचित-अनुचित में फ़र्क़ नहीं जान पड़ता, वह भटका हुआ जिसे न्याय-अन्याय की परवाह नहीं, वह क्या करेगा अपनी रक्षा, अपने धर्म की रक्षा, अपने कुल की रक्षा, अपने समाज की रक्षा, अपने राष्ट्र की रक्षा, इस मानव समुदाय की रक्षा?

माना कि भगवद्गीता आपको त्याग की शिक्षा देती है। आप चाहें तो इस जीवन रूपी युद्ध क्षेत्र से भाग खड़े हो सकते हैं एवं अपने इस कर्म को गौरव प्रदान करने की लालसा से यह दावा कर सकते हैं कि आपने युद्ध जैसी संहारक प्रक्रिया का त्याग किया। **पर अपने आप को इस भुलावे में न रखें कि** भगवद्गीता **इसी त्याग** की शिक्षा आपको देती है। **कदापि नहीं!**

श्री नारायण ने आपको, **आपका कर्म त्यागने को नहीं** कहा था। उन्होनें तो आपको, **अपने कर्म का फल त्यागने को** कहा था। पर आप तो कदाचित **अपने कर्म को ही त्यागने** हेतु उद्यत हो गए!

संदर्भ सूची

~ एल्स्ट, डॉ कोएनराड, अयोध्या - द केस अगेंस्ट द टेम्प्ल, वॉएस ऑफ़ इंडिया, नयी दिल्ली, २००२

~ कामथ, एम वी, अयोध्या - ऐन अनहैप्पी रिफ़्यूज़ल बाई द मुस्लिम्स, द फ़्री प्रेस जरनल, मुम्बई संस्करण, १७ जुलाई २००३, एडिटोरियल पृष्ठ ४

~ गुप्ता, डॉ एस पी, इफ़ ओनली द कोर्ट हैड एग्ज़ैमिन्ड द एविडेन्स, द अयोध्या रेफ़रेन्स - सुप्रीम कोर्ट जजमेंट ऐंड कॉमेंटरीज़, वॉयस ऑफ़ इंडिया, नई दिल्ली, १९९५

~ गोयल, श्री सीता राम, हिंदू टेम्प्ल्स - व्हॉट हैप्न्ड टू देम - वॉल्यूम टू - द इस्लामिक एविडेन्स, वॉयस ऑफ़ इंडिया, नई दिल्ली, १९९१, २०००

~ जॉयस, मुख्य न्यायाधीश एम रामा, ऑन द डिसीज़न नॉट टू डिसाइड, द अयोध्या रेफ़रेन्स - सुप्रीम कोर्ट जजमेंट ऐंड कॉमेंटरीज़, वॉयस ऑफ़ इंडिया, नई दिल्ली, १९९५

~ द सुप्रीम कोर्ट जजमेंट, द अयोध्या रेफ़रेन्स - सुप्रीम कोर्ट जजमेंट ऐंड कॉमेंटरीज़, वॉयस ऑफ़ इंडिया, नई दिल्ली, १९९५

~ बाहरी, डॉ हरदेव, राजपाल हिंदी शब्दकोश, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, २००२

~ शर्मा, विशाल, बाबर्स ऐबेरेशन हॉन्ट्स ए मिल्लेनियम, द फ़्री प्रेस जर्नल, मुंबई संस्करण, १७ जुलाई २००३, ओप-एड पृष्ठ ५

~ शोउरी, डॉ अरुण, भूमिका, द अयोध्या रेफ़रेन्स - सुप्रीम कोर्ट जजमेंट ऐंड कॉमेंटरीज़, वॉयस ऑफ़ इंडिया, नई दिल्ली, १९९५